पोन

राकेश कुमार सिंह

सरहुल के मेले में रंगोला कुजूर की मांदल की धुन पर चंग-पतंग होकर नाची थी बसिया टुडू। देह में फूलों से लदी कनेर की डाल जैसी लचक ऐसी कि रंगोला के मन-प्राण में बस गई थी बसिया टुडू।

चहुं ओर बिखरा था पकी फसल का पीत उल्लास। पलाश फूलों से दिग-दिगंत लाल हो रहे थे। नृत्य का लास्य, आदिम स्वेद मिश्रित देह-गंध और हंड़िया का नशा... उंगली फटने तक मांदल बजाता रहा था रंगोला कुजूर... ताक्-धि-धि... ताक्-धि-धि... धाक्-धिन्ना-धाक्...।

सिर पर हंड़िया का नशा नाच ही रहा था तिस पर नाचती बसिया की उकसाने वाली तिर्यक चितवन. ..। नाच के बाद रंगोला ने बसिया के जूड़े में पवित्र शाल का फूल खोंस दिया था... नेह-निवेदन!

मंद-मंद मुसकाती बसिया ने शाल पुष्प को सहलाते हुए जिस राग से रंगोला को निहारा था, निहाल हो गया था रंगोला कुजूर। कह ही डाला था,

- 'तेरे घर रायबिरौच भेजूंगा। तेरा बाबा मान गया तो उससे भेंट करने आ जाउंगा... जल्दी!'

बिना बाप का है रंगोला, सो जानती थी बसिया। विवाह का प्रस्ताव लाने वाले मध्यस्थ (रायबिरौच) से बात आगे बढ़ने पर पोन (वधू-मूल्य/दहेज का एक रूप) और विवाह की तिथि-स्थान तय करने रंगोला को ही बसिया के घर आना पड़ेगा। 'हां कहने से पूर्व जान लेना चाहती थी बसिया कि रंगोला करता क्या है। खेती-किसानी-परवाही-हरवाही... क्या?

- 'पोन में क्या देगा?' बसिया ने रंगोला की आर्थिक स्थिति थाहने को पूछा था।

- 'जो तेरा बाबा मांगेगा, दूंगा-' रंगोला ने सगर्व बताया था' दामोदर झा के लिए कोयला काटता हूं।'

कोलियरी में ठेकेदार दामोदार झा के दसियों ट्रक-डंपर चलते थे, सो कौन नहीं जानता था? दामोदर झा का अवैध कोयले का कारोबार भी था, सो किसे नहीं पता था? काले कोस दूर हावड़ा में दामोदर झा के ईंट-भट्ठे चलते थे।... बूझ गई थी बसिया कि रंगोला दामोदर के लिए चोरी का कोयला काटने वाला मलकट्टा ही था।

- 'हमें कोयला-चोर से नेह-नाता नहीं जोड़ना।' बसिया ने दो-टूक कह डाला था।

- 'तो किससे?'

- 'किसी से... पर चोर-मलकट्टा से हिरगिस नहीं। हमें रांड़ की जिनगी नहीं जीना।'

रंगोला का मन बुझ- सा गया था। मेले से चली गई थी बसिया पर रंगोला के मन से नहीं। उस रात रंगोला को नींद नहीं आई थी।

बसिया यदि रंगोला के खतरनाक धंधे और अपने कल के प्रति शंकित-सावधान थी तो इसमें कुछ गलत नहीं था। झूठ नहीं कह रही थी बसिया। कोयला-चोर मलकट्टे की जिन्दगी हर दिन एक नया जन्म जैसी जिन्दगी थी। चोर मलकट्टे की मौत कभी-कभी लावारिस ढोर जैसी मौत भी होती थी।

पिछले ही साल बंद घोषित (एबंडंड) खान के सेक्शन में कोयला काटते चोर-मलकट्टों पर सुरंग की छत ढह गिरी थी। घुटनों तक पानी भरी सुरंग...। चूहों की भांति बिलबिलाने लगा था रंगोला का दल। भगदड़ मच गई थी।

खान के भीतर की भगदड़ के बाद बाहर शेष रहा था हाहाकार। जितनी लाशें संभव हो सकी थी प्लास्टिक के बोरों में लपेट कर निकल भागे थे साथी मलकट्टे। रंगोला के सात साथी टनों कोयले-मिट्टी के नीचे दब मरे थे। बाद में बीरन की लाश पुलिस ने निकलवाई थी परन्तु शेष छः कोयला बनने को अभिशप्त वहीं दफन रह गए थे।

बीरन के मां-बाप ने लाश पहचानने से इन्कार कर दिया था ताकि जाने वाला तो गया, पुलिस चोर मलकट्टे के परिजनों को पेर कर न मार डालें। आवारा कुत्ते की मौत मर गया था बीरन मुरमू।

खान-प्रबंधन और अधिकारी पहले तो इस दुर्घटना से अनजान बने रहे और जब जाना तो अज्ञात कोयला-चोरों पर मुकदमा ठोंक दिया था।

उस भयावह रात का तमस् कई महीनों तक रंगोला के भीतर पसरा रहा था। फिर खान में उतरने को कलेजा काठ ही करना पड़ा था।

.... जागी आंखों से रात काटते रंगोला ने भोर होते-होते निर्णय कर लिया था, यदि बसिया ब्याह के लिए मान जाय तो चोरी का कोयला काटना एकदम बंद...।

अगली ही सुबह जब बसिया झरने से पानी भर कर लौट रही थी, रंगोला ने रास्ते में भेंट कर बसिया से पूछा था,

– 'चोरी का कोयला काटना छोड़ दूं तो. ...?

–'जिस दिन छोड़ देगा और पास में पोन के लिए रुपया होगा, मेरे घर के आगे आकर मांदल बजाना। तेरी मांदल पर नाचेगी बसिया।'

–'तू ब्याह कर ले। चोरी का कोयला काटना छोड़ दूंगा। अभी पोन के लिए रुपया जुटा लेने दे।' रंगोला ने वचन दिया था।

–'ना ! मरद की जात और दारू की बात का कोई भरोसा नहीं। चोर-मलकट्टे की जिनगी का भी कोई भरोसा नहीं। लोट ढरकाने को ल्हास भी नहीं मिलती। हमें रांड़ बना कर भीख मंगवाएगा? हमें नरक-भोग भोगवाएगा तू रे?'

तीखी बात...। बसिया ने कहा तो हंस कर ही था परन्तु बसिया की मुस्कान में इतनी मिठास नहीं थी जो रंगोला के कलेजे में लगे घाव को ठंढक पहुंचा पाती! रंगोला के कलेजे में बबूल के कांटे की भांति धंस गई थी बात. ..। चोर...। कोयला-चोर...! चोर-मलकट्टा!!

परन्तु क्या जन्म से ही चोर जन्मा था रंगोला कुजूर?

• • •

रंगोला कुजूर मां के गर्भ से ही चोर नहीं जन्मा था। रंगोला और रंगोला जैसे हजारों रंगोलाओं का जनक था आजाद भारत का सरकारी तंत्र! कोयला चोरों को जन्म दिया था भारत सरकार ने! आज नहीं, वर्षों पहले..!

वर्षों पूर्व लागू हुआ था 'कोल बियरिंग एक्ट 1957...'! जंगल-गांव उजाड़ने वाला यह सायानाशी हथियार खान मालिकों को सौंपा था स्वयं भारत सरकार ने। खनन हेतु अधिकृत भूमि को बलात् खाली करवाने लगे थे खान मालिक।

सिलीदाग, छीपादोहरे, पीपरा, ढ़ांचाबार आदि गांवों धड़धड़ाने लगे थे बुलडोजर! पागल हाथियों की भांति झोंपड़े-दीवारें ढाहने लगे थे लोहे के दानव। रौंदने लगे थे खेत-फसल! गांव-खेतों को आनन-फानन खान में बदलने लगे थे खनिकों-श्रमिकों के दल। रंगोला के दादा रूपलाल कुजूर के पास वन सीमा के निकट जो खेत थे उनके नीचे भी कोयला निकल आया था।

जब तक भारत की सर्वोच्च अदालत सरकारी शह पर चलती इस दादागिरी को रोकती, वन क्षेत्र के दसियों गांवों की छाती पर घाव की भांति खुल चुकी थीं कोयले की खाने।

रूपलाल और रंगोला का पिता रंगलाल जिस जमीन पर माटी-मटाल होकर चार माह तक का मोटा अनाज उपजा लेते थे, अब पेट-रोटी के लिए उसी भूमि पर खुदी खदान में कोयला काटने लगा था रंगलाल। कल का कृषक-पुत्र अब मलकट्टा था। अप्रशिक्षित श्रमिक...!

छलनी-छलनी फेफड़ों वाला रंगलाल अधेड़ उम्र में ही रक्तिम बलगम थूकता मर गया था। विरसे में छोड़ गया था गैंता-सरिया-बेलचा और कर्ज ! रंगोला नाबालिग था, मलकट्टा नहीं बन सकता था सो बचपन से ही दामोदर झा के लिए कोयला ढोने लगा था और अब दामोदर के लिए ही चोरी का कोयला काटता था।

निर्धारित सरकारी सीमा तक खुदाई कर लेने के बाद खदानों के खोखले पेट में भरने हेतु रेत की खरीद होती थी। हर वर्ष बालू-भराई के करोड़ों रुपए ठेकेदार-अधिकारी डकार जाते थे और कागज पर बंद घोषित खदानें आदमखोर अजदहों की भांति 'धरती पर मुंह खोले पड़ी हुई थीं। टोरी, रजरप्पा, झुरकुंडा,

धनबाद, झरिया... हर जगह! अनेक अजदहे थे।

ऐसे ही अजदहे के पेट से कोयला निकलवाता था दामोदर झा। खान धंसने तक ऐसी खानों से अवैध कोयला कटवाते थे कोयला माफिया। मलकट्टों के लिए सैकड़ों फीट गहरे कुएं-सुरंग में साधनहीन उतर कर कोयला काटना जीवन-मौत का खेल था।

मात्र डेढ़ सौ रुपयों की खातिर रंगोला भी जान की बाजी खेलता था और इन डेढ़ सौ में से भी बीस रुपए तो इलाके का रंगदार, दामोदर झा का भाई मदन झा ही छीन लेता था। फिर भी एक सौ तीस रुपए कम नहीं थे। बिना कर्ज-उधारी घर का चूल्हा जल सकता था परन्तु बसिया को तो कोयले की काली कमाई से ही चिढ़ थी।

बैठे-बैठे जमा पूंजी खाते महीना बीतने लगा था। रोजी-रोजगार का कोई अन्य साधन नहीं दिख रहा था। बार-बार रंगोला के साथी उसे खान में उतरने को खींचते थे पर बसिया की बात और बीरन की भयावह मौत की फांस रंगोला को चोरी का कोयला काटने से रोक देती थी।

दामोदर झा का साथ छोड़ने की बात जान कर खुश हो गई थी बसिया पर बसिया का पिता ठूंठा टुडू दांत से पैसा पकड़ता था। बेटी की कमाई पर जीने वाले ठूंटा की तीनों बेटियां मानों तीन बकरियां थीं जिनके लिए पोन में ठूंठा को ढेर सारा रुपया चाहिए था और रंगोला की कमाई का स्रोत सूख चुका था। जमा पूंजी चुकती जा रही थी।

बिना भरपूर पोन वसूले ठूंठा टुडू बेटी ब्याहने वाला नहीं था। बेटियां ही उसकी दुधारू गाएं थीं जिनके थनों से खून निकलने तक दुह रहा था ठूंठा टुडू !

घर की इकलौती कमासुत सदस्य थी ठूंठा की बड़ी बेटी कोईली जिसकी कमाई पर चार पेट पल रहे थे। बसिया की बड़ी बहन कोईली ब्लॉक के प्रखंड विकास पदाधिकारी के क्वार्टर पर महरी-बावर्चिन का काम करती थी। सुबह-शाम सफाई-चौका-बर्तन कर सौ रुपए पाती थी और एक बार पेट गिरा चुकी थी। बाकी सारा दिन कोईली मदन झा के ईंट-भट्ठे पर मिट्टी कूटती थी या ईंटें ढोती थी।

एक शाम इतवारी हाट में बसिया के सामने पराजित स्वर में बोला था रंगोला,

-'मेरे करम में तू नहीं है।'

-'मन छोटा मत कर। साल भर तेरी राह देखेगी हम'- बसिया ने आश्वस्त किया था- फिर भी पोन भर रुपया नहीं कमा सका तो किरिया खाते हैं, करमा पूजा के बाद हम दोनों भाग कर ब्याह कर लेंगे।'

-'ना। तुझे तो पोन देकर ही लाउंगा-' खुश हुआ था रंगोला- 'अब मुझे भी जिद है, तेरे बाबा को खुश कर के ही तेरे घर के सामने मांदल पीटूंगा।'

-'देवता पूजेगी हम, सिंगबोंगा को गोहराएगी हम कि तेरा मान रखें देवता।'

उन्हीं निराश सुबहों, थकी शामों और हताश रातों के समय में रंगोला की भेंट छतरमन पहान से हुई थी। 'जंगल बचाओ मोर्चा' नामक एक भूमिगत संगठन का एरिया कमांडर था लालगढ़वा गांव का छतरमन पहान!

पुलिस गाड़ी वहीं खड़ी थी पर पुलिस विभाग को छतरमन ढूंढ़े नहीं मिल रहा था। कोलियरी के मुख्य फाटक पर जमा भीड़ के सामने भाषण दे रहा था पहान, 'खंचिया भर कोईला उठा लिया तो हम चोर और बेहक हमारी जमीनों पर डाका डाल कर खान खोद लिया सो गैरकानूनी नहीं?... असली कोयला चोर है दामोदर झा और चोर के गिरहकट साथी हैं बालू का रुपया खाने वाले साहब लोग... हम सच बोलें तो सरकार हम पर पुलिस दौड़ाती है... हमें पुलिस से मरवा कर बड़ी कंपनियों के लिए जंगल साफ करवाना चाहती है गुरमेंट..। हमारी जमीन, कोयला, तांबा, अबरख, अलमूनियम, जस्ता..सब लूटने के लिए हम जंगलियों को जंगल समेत साफ करवा देना चाहती है सरकार. हम लड़ेंगे... हक के लिए... अंतिम सांस तक...।'

पहान से छोटी-मोटी भेंट-पहचान थी। भाषण के बाद पहान को सलाम-रमरमी करने लगा था रंगोला तो पहान ने कहा था,

-'सुना है तूने कोयला काटना बंद कर दिया?'

-'हां।'

-'ठीक किया। चोर बन कर जीना भी खराब... चोर की मौत भी खराब! बीरन की मौत का बदला लेना हो तो हमारे साथ चल। गांव-समाज को भी चोर की मौत मरने से रोक। मरना ही है एक दिन सबको तो कोयला-चोरों से लड़ते हुए मर। बिना लड़े हक नहीं मिलता रे बाबू!'

रंगोला के मन को रुच गई थी छतरमन पहान की बात! पहान को गुरु मान लिया था।

'जंगल बचाओ' का सक्रिय सदस्य बनने से पूर्व नए आदमी को प्रशिक्षण दिया जाता था। रंगोला को पहान ने प्रशिक्षण हेतु खूंटी के जंगल में भेज दिया था।

खाना-खोराकी, कपड़ा-लत्ता और सौ रुपया महीना पाने लगा था रंगोला। कहीं आने-जाने पर भाड़ा-खोराकी भी मिलती थी।

छठे माह जब गांव लौटा था रंगोला तो उसके पास पाई-पाई कर जोड़े हुए बारह सौ रुपए और दो दिन की छुट्टी थी। रंगोला को विश्वास था कि हजार रुपए से अधिक पोन मांगने की औकात ठूंठा की नहीं थी और दो दिन में ब्याह निपट सकता था।

अपने घर पहुंच कर रंगोला ने घर की साफ-सफाई की थी। अपनी खूंटी पर टंगी

सोई मांदल को उतारा था। झाड़-पोंछ कर मांदल की डोरियां कसी थीं। अब वह पूरे आत्मविश्वास के साथ बसिया के दरवाजे पर मांदल बजा सकता था।

● ● ●

पिछले छः महीनों से लापता था रंगोला कुजुर...। न रंगोला के गांव-समाज में किसी को रंगोला की खोज-खबर थी, न ही पर्व-पूजा या हाट-बाजार में दिखता था रंगोला। पूछने पर कह देते थे लोग,

-'बिगड़े बैल और बड़ा आदमी का क्या ठिकाना! जिधर चारा-दाना दिखा निकल गया। कौन हिसाब रखे?'

रंगोला की मांदल की आवाज सुनने को प्रतीक्षित बसिया के कान छछनते रहे थे पर रंगोला पता नहीं कहां गुम...! लेकिन जहां भी था, बसिया को विश्वास था कि उसके नेह-स्नेह से बंधा धुन का धुनी रंगोला करमा पूजा तक जरूर वापस लौटेगा। पोन का रुपया कमा कर आएगा रंगोला और बसिया के घर के सामने जरूर मांदल बजाएगा। कैसे घिरनी की भांति मांदल के भरे चमड़े पर उंगलियां नचाता था रंगोला...? मांदल की अनबजी धुन बसिया के कानों में गूंजने लगती थी... ताक्-धि-धि... ताक्-धि-धि...धाक्-धिन्ना धाक्...!

● ● ●

चूल्हा जला चुकी थी पुतली! बसिया ने मुनगा की सब्जी बना ली थी। भात का अदहन चढ़ा दिया था। चावल लेकर अभी तक नहीं आई थी कोईली... देर हो रही थी।

सांझ से ही मदाड़ी मुंडा सांप की भांति टूठा टुडू के चूल्हे के निकट कुंडली मारे बैठा हुआ था।

बहुधंधी ठेकेदार दामोदर झा का हावड़ा में ईंटों का भट्ठा चलता था। फागुन से आषाढ़ तक के सूखे दिनों में मिट्टी कूटने, मिट्टी सानने, ईंटे पाथने-पकाने और लादने के लिए सस्ती रेजा-मजदूरिनें जंगल से ही ले जाता था दामोदर झा। गांव-गांव घूम कर दामोदर झा के लिए रेजा जुटाता था मदाड़ी मुंडा!

मदाड़ी मुंडा रेजा-मजदूरिनों के परिजनों-अभिभावकों को दो-चार माह पूर्व ही उधार-अग्रिम के जाल में फंसा लेता था। ठूंठा ने भी अपनी छोटी बेटी पुतली को हावड़ा भेजने के करार पर मदाड़ी से पांच सौ रुपए बयाना लिया था। अब परसों दामोदर झा का ट्रक हावड़ा के लिए निकलने वाला था सो मदाड़ी रेजा चलाने (तैयार रहने का तगादा) आया था।

चूल्हे से एक लाठी परे बैठे ठूंठा के साथ बैठा मदाड़ी मुंडा ठूंठा के हुक्के पर चिलम चढ़ाए हुक्का गुड़गुड़ता रह-रह कर तितकी मिरचाई जैसी मारवा बोल रहा था।

-'तीनों छौंड़ियां ताड़ हो गईं। काकू, अब तो इन्हें घर से निकालो।'

- 'कोई रायबिरौच भी तो आवे रे।' ठूंठा ने मुंह बिचकाया।

-'रायबिरौच छोड़ो काकू, एक तो हमीं तैयार हैं'- ललचाई आंखों से ताकता मदाड़ी बोला-' बसिया को हमें दे दो। रानी बना कर रखूंगा। पोन में पांच सौ नगद और तीन बच्चों वाली दूधगर बकरी भी बांध दूंगा।...

-'बहुत बोलता है हरामी...। मदड़िया को घूरती बसिया फुंफकारी।

क्यों न बोलता मदाड़ी? मर्द की मर्दानगी रुपए से ही तो होती है। मदाड़ी मुंडा के पास कोलियरी का काला रुपया खूब था सो बोली भी नए नोट जैसी कड़कड़-करारी निकलती थी।

बरवाडीह से रजहरा-टोरी तक की बंद घोषित खदानों से चोरी का कोयला कटवा कर देहात के वैध-अवैध ईंट-भट्ठों तक सस्ता कोयला पहुंचाने वाले दामोदर झा के तस्कर गिरोह का एक दलाल था मदाड़ी मुंडा। लातेहार-पलामू के अरण्य में कई ठेकेदारों ने कोयले के काले कारोबार हेतु ऐसे गिरोह पाल रखे हैं। बेरोजगार युवक-किशोर ही नहीं, बच्चों तक को कोयला तस्करों ने नशेड़ी बना कर रुपए दिखा कर अवैध कोयला ढोने में लगा रखा है।

चोरी की लत, मुफ्त की दारू-सिगरेट और आसान कमाई का चस्का...। बेईमानी का रुपया मेहनत की कमाई से बहुत अधिक होता था सो ऐसे रुपये को शत्रु की भांति नष्ट करता था मदाड़ी। रोज ठूंठा के लिए एक चिलम तंबाकू...। मदाड़ी के रुपए की महक से भरमाया रहता था ठूंठा टुडू!

कोईली घर पहुंची तब चूल्हे में भरा गोंईठा (उपले) लह-लह कर रहा था। बटलोही की पेंदी में लगा लेवन मिनसार के आकाश-सा दहक रहा था। बटलोही में नाचता अदहन का पानी चावल मांग रहा था।

कोईली को देखते ही सींझते भात की भांति खदक उठी बसिया,

-'आ गई सतमतरी!'

-'का बोली रे?' चावल की पोटली पुतली को थमा कर दांत पीसती कोईली भी चूल्हे के निकट जा बैठी है।

-'बोली कि हमारे हाथ का छुआ पानी तक नहीं पीते दीकू लोग फिर तेरा मुंह चाटते घिनाता क्यों नहीं है बिड्डी...?'

खूब जानता था ठूंठा भी कि दीकू (जंगल के बाहर का गैर आदिवासी) बी.डी.ओ. कोइली की देह भी... परन्तु हुक्का पीता ठूंठा बेटियों की बतरस से निरपेक्ष होने का अभिनय करता हुक्का गुड़गुड़ाता रहा। अलबता मदाड़ी की आंखों में भी कान उग आए थे। चक्षुश्रवा. ..।

- 'दूसरे दीकू लोग जैसा नहीं है बीड्डी। हमारे हाथ का बना ही तो खाता-पीता है-' कोईली ने अभिमान से बताया-' चार पैसे भी देता है। रंगोलवा क्या देता था जो उसकी

मांदल पर नाचती थी तू?

-'फिर नाचेंगे। रंगोला ब्याह करेगा हमसे. .. पोन देकर'- बसिया ने सगर्व कहा- बीड़डी ब्याह करेगा तुझसे? भट्‌ठा मनीजर तिरहुतिया अपने घर की औरत बनाएगा तुझे?'

मदाड़ी ने बुझती चिलम से आखरी धुआं चूस कर हुक्का दीवार से टिकाया।

-'अब हम चले काकू। घर की बात में हमारा क्या काम? ट्रक भट्‌ठे पर खड़ा है, परसों...सवेरे... याद रहे।'

-'हां रे, जाएगी पुतली।'

-'... और उधर से बुधनी, गोनवां, परबतिया जैसा पेट सजा कर गांव लौटेगी। बच्चे के बाप का नाम लापता बाकी बकरी-छेरी जैसा बच्चा गिराएगी।' बसिया ने कोने में थूक दिया।

-'तुमको तो सगरे दुनिया का आदमीन एक्के जैसा ऐबी दिखता है। एक ही तो सांचा आदमीन है धरती पर जिसमें कोई खराबी नही, सो रंगोलवा है।' सतमतरी की गाली सुन कोईली का कलेजा अभी तक लहकते लेवन-सा दहक रहा था।

-'हंड़िया-पोचई में नाक डाल कर पड़ा नहीं रहता मेरा रंगोला।' बसिया ने अभिमान से कहा।

-'सो कौन जाने पर सुनते हैं आजकल रंगोलवा पहान छतरमन की रैफल टांग कर घूमने लगा है।'

-'तो क्या?' चिढ़ गई बसिया- 'अपना हक मारने वाले पर फूल-माला चढ़ाएगा कोई। मरद है रंगोला, बन्दूक टांगता है, बेटी-बहिन की दलाली तो नहीं खाता?'

-'चोप्प...! जब देखो जहर छेरती रहती है माहुर की गगरी।' बसिया ने ठूंठा की दुखती नस जो दबा दी थी।

- 'हम नहीं कहते कि इज्जत-पानी के साथ कमाने-खाने में कोई खराबी है'- बसिया ने सफाई दी'- बाकी हबड़ा के गबड़ा में देह बेच कर भात खाना भी कोई जिनगी है?'

पुतली को भी अब भान होने लगा था कि हावड़ा में उसके साथ बुरा घट सकता था।. .. डर गई पुतली। विवश सुबकिया लेने लगी पुतली।

-'लोर मत ढरका नन्हकी। मन तौल कर बोल, 'जाएगी?' बसिया ने पूछा।

-'बाबा भेज रहा है सो?'

-'कहने दे बाबा को। बिन माई की बेटी जात को अपना भला बुरा अपने से सोचना पड़ता है। जान ले, दामोदरा लड़कियों की दलाली भी करता है। वह ददामी अपने तो नोचेगा ही दूसरों से भी...

-'चोप्प बिछ खोपड़ी'- गरजा ठूंठा-' आगे कुछ बोली तो मुंह में लुआठी ठूंस देंगे। दो अंजुरी अनाज कमा कर लाती तो जानते हम कि है तू भी घर में बोलने-सिखाने लायक।'

-'मुरगी बुढ़ा जाती है तो मुंड़ी काट कर बटलोड़ी में सिंझा दी जाती है। अभी तू नई है, नहीं बूझतीं- ठूंठा के आग्नेय नेत्रों की उपेक्षा करती बसिया ने कहा-' दामोदरा अपने भट्‌ठे में लड़कीपन की जिनगी-जवानी सब झोंक देता...'

-'हां रे मंझली'- 'कोईली ने बात काट दी-' घर में बैठे-बैठे हमें भी तेरी तरह गोल-गोल भात मिलता रहता तो हम भी सिखाते नन्हकी को अकिल की बात!'

बसिया चुप! पिता और बड़ी बहन दोनों बसिया से असहमत! घर में बैठे-बैठे खाने का ताना! घरेलू कामों में देह खटाने को कोई मोल-लिहाज नहीं?

-'रुपया ले चुके हैं। खर्च भी हो गया रुपया। तू कपड़ा-लत्ता फींच-सरिया ले पुतली।' ठूंठा का आदेश पुतली के सोच पर कोड़े की भांति लहराया।

-'तो नन्हकी को बलाबस्ती हवड़ा भेज कर ही मानेगा तू?' बसिया के नथुने फूलने पिचकने लगे।

-'तो क्या तू देगी पांच नम्बरी मदड़िया को लौटाने को?'

घर में तनाव भरा सन्नाटा तन गया। घर के पीछे बेहया के जंगल में लड़ते सियारों की खोंखियाहट स्पष्ट सुनाई देने लगी। गर्मियों में स्यारों-भेड़ियों की गर्भवती मादाएं विश्राम कर रही थीं और अखेट पर निकले नर एक-एक चूहे खरगोश के लिए लड़-मर रहे थे। ठूंढा टुडू की आंखों में भी बनैला गुस्सा था।

-'ठीक है बाबा'- रूआंसी हो उठी बसिया-' तू भी क्या करे? जब मांझी थान और जाहेर थान का देवता तक दो बोतल दारू में बिक जाता है तो तू तो आदमीन ही है। तेरा क्या दोष बाबा जो तू भी बिक गया और तेरी बेटी भी...

शायं...। ठूंठा ने चूल्हे से जलती लुकाठी बसिया की ओर खींच मारी। कोयली ने लायक कर बांह न पकड़ी होती तो धधकती लुकाठी दीवार पर नहीं, सीधे बसिया के मुंह से टकराती!

सन्न बसिया! हदस गई पुतली। दूर कहीं मादल बज रही थी... ताक्-धि-धि ताक्! धाक्-धिन्ना धाक्...!

-'तूने बाबा..? तूने...?' आंखों से अंगार बरसाती बसिया उठ खड़ी हुई।

-'हां.. तेरे जैसी...

-'नहीं रहना हमें यहां'- बसिया ने गरजते ठूंठा की आवाज को दबा दिया।

-'मंझली,... बात सुन।' कोईली ने रोका

-'नहीं रहना हमें बेटी-बेचवा बाप के साथ। तुझे निभाना ही है दिदिया तो तू मर यहीं नरक में।' बसिया की आवाज...। जैसे पानी पड़ने पर कड़कड़ाती है तेल वाली ढिबरी।

-'दिदिया गेऽऽऽ'। फफक उठी पुतली।

-'आक् थूऽऽऽ...' घृणा से ठूंढा को ताकती बसिया के सूखे कंठ-तालू से थूक का एक छींटा न निकला पर मनों थूक के नीचे दब गई कोईली। दब गया ठूंठा टुडू।

देहरी फांद बाहर निकल गई बसिया। आगे बढ़ी तो दिखा, पलाश के नाटे वृक्ष की छाया के निकट पहुंच रहा था रंगोला कुजूर! लंबे-लंबे डग भरता, गले में मांदल लटकाए उसके घर की दिशा में बढ़ता आता रंगोला।

दौड़ी बसिया। रंगोला को पलाश की छाया तले जा रोका। गुस्से से कांपती बसिया ने कह दिया।

-'हमने घर छोड़ दिया रंगोला। अब पोन-सोन...'

-'लाया हूं पोन!' हंसा रंगोला-' ले ले. .। मेरी देह... देह का सारा खून... मेरी जिनगी... तेरे लिए तो...

आवेशित बसिया रंगोला से हठात् वनलता-सी लिपट पड़ी। फूट पड़ी बसिया

-'हंसता है रे निरमोही... यहां करेजे में दाह...।'

रंगोला को लिए-लपेटे ढह पड़ी बसिया। अकबका गया रंगोला। मांदल कंधे से सरक लुढ़की, रंगोला की छाती में मुंह गाड़े फफक-फफक कर रो रही थी बसिया। रंगोला अप्रतिम... भौंचक...।

-'का हुआ रे? बाबा से भेंट तो करने दे. ..सब ठीक होगा।'

-' मर गया बाबा।'

-'ऐं...? फिर पोन किसे...?'

-'आग लगे पोन में।'

-'रुपया है रे... नगद...'

-'चूल्हे में झोंक दे रुपया।'

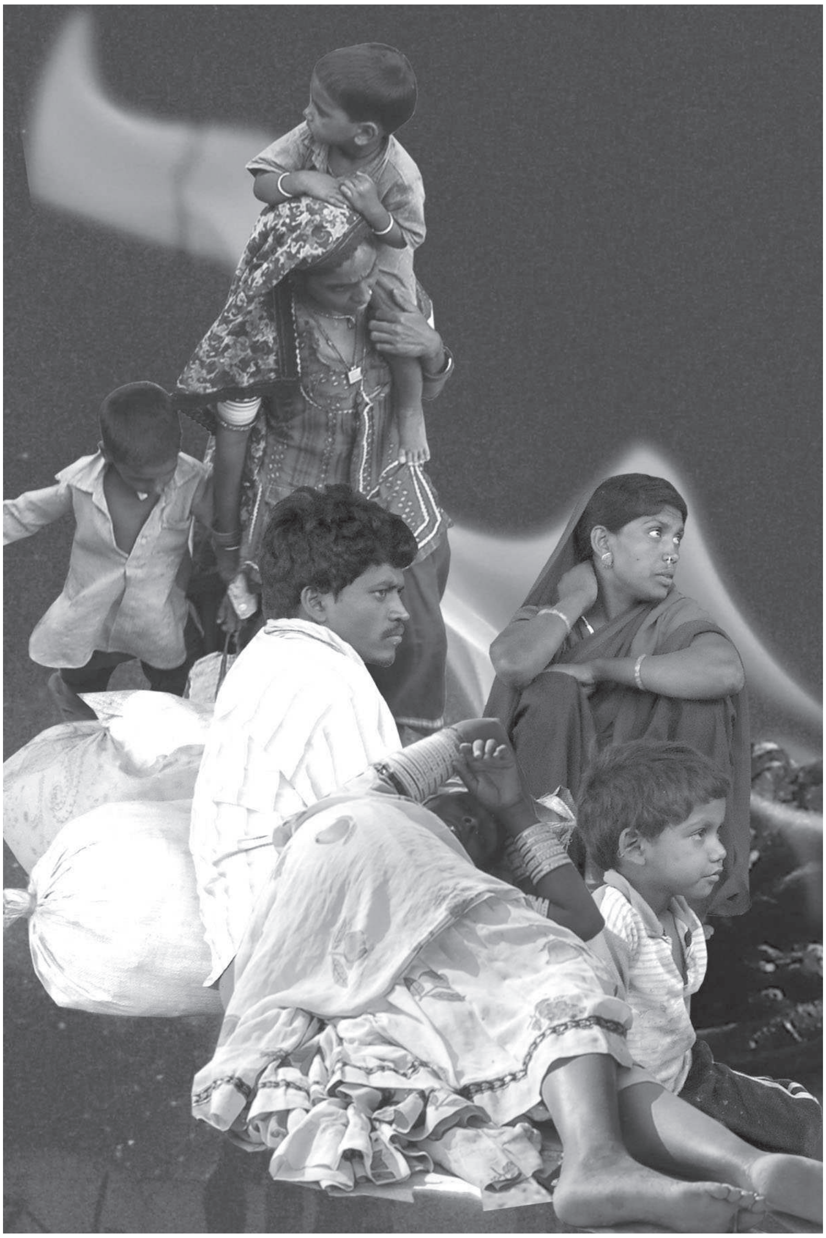

हिसक-हिसक कर रोती बसिया के बाहुपाश की जकड़न कसती गई। घर की देहरी पर खड़ी कोईली की आंखों से भी बेटी-विदाई की घड़ी वाले धार-धार आंसू बह रहे थे। वचन दिया था, सो आड़े हाथों से मांदल पर थाप देने लगा रंगोला। अंधकार की वेणी में कुमुदनी के बड़े फूल-सा टंका चंद्रमा विहंस रहा था। धाक्-धिन्ना-धाक्...ताक्...धि-धि-धाक्...!

❐❐

कंचन प्रभा
जय प्रकाश नगर (कतीरा)
आरा-802301, भोजपुर (बिहार)
मो. नं. 09431852844